P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-1* ISSUE-12* March- 2017
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

बस्तर के डोंगर क्षेत्र में हल्बा विद्रोह (1774 ई. – 1779 ई.)

डिश्वर नाथ खुटे
सहायक प्राध्यापक,
इतिहास अध्ययन शाला विभाग,
पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय
रायपुर

सारांश

लाला जगदलपुरी के अनुसार हल्बा लोगों को बस्तर के काकतीय शासक अन्नमदेव ने बडे सम्मान के साथ अपने राज्य में अनेक सुविधाएं दे रखे थें। वे राजा के विश्वासपात्र अंगरक्षक थे, उन्हें मोकासा गांव मिले थें। वे अपने कृषि भूमि के माफीदार कृषक थे, उनकी कृषि भूमि लगान मुक्त थी। दस्तावेजों और लोक संपर्क के आधार पर ग्लासफर्ड द्वारा प्रस्तुत एक उल्लेख से यह जानकारी मिलती है कि बस्तर के चालुक्यवंशी (काकतीय) राजा उपने आंतरिक सुरक्षा दल के लिये जिन 18 खास –खास सौभाग्यशाली स्थानों से नियत, मात्र 18 खास–खास हल्बा परिवारों से योद्धा नियुक्त करते थे, वे थे – अंतागढ़, नारायणपुर, छिंदगढ़, बड़े डोंगर, छोटे डोंगर, बारसूर, बीजापुर, जैतगिरी, भैरमगढ़, मरदापाल, माड़पाल, सिहावा और वृन्दानवागढ़ आदि। डोंगर वह क्षेत्र है जहां हल्बा विद्रोह प्रारंभ हुई थी। इस विद्रोह के कई कारण थे जिनमें भौगोलिक सीमा, अनिश्चित वर्षा, आवागमन के कठिन साधन, कृषि योग्य सीमित भूमि तथा अजमेर सिंह की उपेक्षा प्रमुख कारण रहे है।

मुख्य शब्द : वत्सर, दण्डकारण्य, गादी पखना, मोकासा, डोंगर, जयपुर, हल्बा, माड़िया, मालकोट,परगना, ताड़झोकनी, महादान।

प्रस्तावना

बस्तर भूषण के लेखक पं. केदारनाथ ठाकुर ने बस्तर के निवासी के रूप में जिन 24 जातियों का उल्लेख किया है, उसमें हल्बा जाति एक है। बस्तर के निवासियों से बहुत साफ–सुथरे रहते है, पहनावा भी इनका अन्य लोगों से अच्छा रहता है बस्तर में ये लोग लड़ने वाली जाति मे है। सिपाहियों का काम सदा से ये लोग करते आये है। जगदलपुर में दरियावदेव एक कुख्यात शासक किन्तु साहसी आदमी था और प्रभावशाली शासन–व्यवस्था में सक्षम था। उसकी सशस्त्र सेना व्यवस्थिता नही थी। इसका कारण यह था कि वह भोंसलो (मराठों), अंग्रेजी कम्पनी सरकार तथा जयपुर के राजाओं की चापलूसी भी करते रहता था। 1774 ई. में दरियावदेव 38 वर्ष की आयु में बस्तर की राजगद्दी पर बैठा तो दोनों भाईयों अजमेर सिंह व दरियाव देव में सत्ता के लिये संघर्ष प्रारंभ हो गया। जब–जब बस्तर के इतिहास मे विभिन्न जनजातियों के महत्वपूर्ण उथल–पुथल वे असंतोष के अवसर आये तब–तब डोंगर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। डोंगर वह क्षेत्र है जहां हल्बा विद्रोह प्रारंभ हुई थी। इस विद्रोह के कई कारण थे जिनमें भौगोलिक सीमा, अनिश्चित वर्षा, आवागमन के कठिन साधन, कृषि योग्य सीमित भूमि तथा अजमेर सिंह की उपेक्षा प्रमुख कारण रहे है।

उद्देश्य

1. बस्तर के आदिवासी सरल व शांत प्रवृत्ति के होते है लेकिन उनके जीवन, प्रकृति व सामाजिक संस्कृतिक के खिलाफ शासकीय नीतियां द्वारा उनमें परिवर्तन होने पर वे विरोध भी किये है जिनका अध्ययन इस शोध पत्र में किया गया है।
2. अपने जीवन की चिंता न करते हुए वे आदिवासी अपने पंरपरागत शस्त्र फरसा–भाला, तीर कमान कुल्हाड़ी आदि से ही अंग्रेजी व मराठा सैनिको से लड़ाई लड़ी है।
3. इस आदिवासी विद्रोह को भारत के किसी भी विद्रोह में शामिल नहीं किया गया है जबकि यह विद्रोह बस्तर के अदिवासी द्वारा आंग्ल मराठा सैनिकों के विरूध्द किया गया पहला विद्रोह है, जिनका अध्ययन आवश्यक है।
4. हल्बा विद्रोह के नायक अजमेर सिंह अपनी स्वाभाविक मौत नहीं मरा है, बल्कि आंग्ल मराठा शासको के कुचक्र द्वारा उनकी हत्या की गई है ,अतः उन्हें शहीद मानी जानी चाहिए।

बस्तर छत्तीसगढ़ प्रभाग (मध्यप्रांत) की एक प्रमुख रियासत थी। यह रियासत छत्तीसगढ़ के सभी 14 रियासतों में सबसे बड़ी थी, जिसकी राजधानी जगदलपुर थी।[1] बस्तर अपनी सांस्कृतिक, पुरातात्विक एवं भौगोलिक विशेषताओं के कारण देश के आकर्षण का केन्द्र है। यह भारत ही नहीं बल्कि पूरे एशिया महाद्वीप का सबसे बड़ा आदिवासी अंचल है।[2]

प्राचीन समय में यह अचंल आर्य और अनार्य संस्कृति का संगम स्थल था, जो वत्सर, दण्डकाण्य, महाकान्तार, चक्रकूट, काकरय आदि नामों से प्रसिद्ध रहा है। भारत का सोया हुआ दैत्य, शोधकर्ताओं का स्वर्ग तथा विचित्रताओं का प्रदेश भी इसे कहा गया है। छत्तीसगढ़ प्रांत का दक्षिण में स्थित बस्तर अंचल में वनवासी अपने आंसुओं और मुसकानों का जीवन बिताते आ रहे है।[3]

बस्तर भूषण के लेखक पं. केदारनाथ ठाकुर ने बस्तर के निवासी के रूप में जिन 24 जातियों का उल्लेख किया है, उसमें हल्बा जाति एक है।[4] बस्तर के निवासियों से बहुत साफ–सुथरे रहते है, पहनावा भी इनका अन्य लोगों से अच्छा रहता है बस्तर में ये लोग लड़ने वाली जाति मे है। सिपाहियों का काम सदा से ये लोग करते आये है।[5] वारंगल के काकतीय शासक प्रताप रूद्रदेव का छोटा भाई अन्नमदेव ने बस्तर स्थित नागवंश के राज्य चक्रकोट पर आक्रमण किया। इस समय नाग राजाओं के छोट–बड़े 84 गढ़ थें।[6]

अन्नमदेव ने नाग राज्य के हदयस्थल बारसूर व चित्रकोट पर आक्रमण कर नाग राजा हरिश्चंद देव एवं चमेली बाई को अंतिम रूप से पराजित किया और 1324 ई. में सम्पूर्ण प्रदेश का एकक्षत्र स्वामी बन गया। अन्नमदेव का राजतिलक बडे डोंगर मे हुआ। इसी दिन से डोंगर में राजतिलक की प्रथा चल पड़ी। उनका राजतिलक जिस शिलाखण्ड पर हुआ था वह ''गादीपखना'' के नाम से प्रसिद्ध है।[7]

लाला जगदलपुरी के अनुसार हल्बा लोगों को अन्नमदेव ने बडे समान के साथ अपने राज्य में अनेक सुविधाएं दे रखे थें। वे राजा के विश्वासपात्र अंगरक्षक थे, उन्हें मोकासा गांव मिले थे वे अपने कृषि भूमि के माफीदार कृषक थे, उनकी कृषि भूमि लगान मुक्त थी।[8] दस्तावेजों और लोक संपर्क के आधार पर ग्लासफर्ड द्वारा प्रस्तुत एक उल्लेख से यह जानकारी मिलती है कि बस्तर के चालुक्यवंशी (काकतीय) राजा अपने आंतरिक सुरक्षा दल के लिये जिन 18 खास–खास सौभाग्यशाली स्थानों से नियत, मात्र 18 खास–खास हल्बा परिवारों से योद्धा नियुक्त करते थे, वे थे अंतागढ़, नारायणपुर, छिंदगढ़, बड़े डोंगर, छोटे डोंगर, बारसूर, बीजापुर, जैतगिरी, भैरमगढ़, मरदापाल, माड़पाल, सिहावा और वृन्दानवागढ़ आदि।[9]

काकतीय शासक प्रतापदेव (1501 – 1524 ई.) ने साम्राज्य विस्तार हेतु दक्षिण में बहमनी राज्य पर आक्रमण किया जिसमें वह परास्त हो गया लेकिन उत्तर में डोंगर के आसपास स्थित 18 गढों पर अधिकार कर वहां का शासक अपने छोटे भाई को बनाया। यहीं से काकतीय वंश का शासन दो शाखाओं में विभक्त हुआ। इस दूसरी शाखा की राजधानी डोंगर को बनाया गया।[10]

बस्तर के राजा अपने कनिष्ठ बेटों को इस उपराजधानी का गर्वनर बनाया करते थें इसके पीछे एक कारण यह भी रहता था कि वे शासन के वास्तविक अधिकारी बेटे के रास्ते में न आयें। जब दलपत देव (1731 –1774 ई.) बूढ़े हो गए, तो वे अपने छोटे बेटे दरियाव देव को बस्तर का शासक नियुक्त करना चाहते थे। उस समय उन्होनें अजमेर सिंह जो कि गद्दी का सही वारिस था, डोंगर का गर्वनर नियुक्त कर दिया। दलपतदेव के इस कार्य को हल्बाओं ने पसंद नहीं किया और वे इस बात से नाराज हो गए क्योंकि यह न्याय सही नहीं था।[11] दलपत देव की सात रानियां थी। बडी रानी रामकुंवर कांकेर राजपरिवार से आई थी, उसके पुत्र का नाम अजमेर सिंह था, तीसरी रानी कुसुम कुंवर थी जिसके पुत्र दरियाव देव था जो कि दलपत देव के सभी पुत्रों में उम्र में सबसे बड़ा था वहीं अजमेर सिंह पटरानी का पुत्र होने के कारण गद्दी का वास्तविक उत्तराधिकारी समझता था।[12] अजमेर सिंह की मां कांकेर के राजा की बेटी थी और हल्बाओं के हृदय में कांकेर के राजा के प्रति सम्मान था। कांकेर के राजा के सिंहासन रूद्र के समय पहला टीका हल्बा ही करते थे।[13]

जगदलपुर में दरियावदेव एक कुख्यात किन्तु साहसी आदमी था और प्रभावशाली शासन–व्यवस्था में सक्षम था। उसकी सशस्त्र सेना व्यवस्थिता नहीं थी। इसका कारण यह था कि वह भोंसलो (मराठों), अंग्रेजी कम्पनी सरकार तथा जयपुर के राजाओं की चापलूसी भी करता रहता था।[14] 1774 ई. में दरियावदेव 38 वर्ष की आयु में बस्तर की राजगद्दी पर बैठा तो दोनों भाईयों अजमेर सिंह व दरियाव देव में सत्ता के लिये संघर्ष प्रारंभ हो गया।

जब–जब बस्तर के इतिहास में विभिन्न जनजातियों के महत्वपूर्ण उथल–पुथल वे असंतोष के अवसर आये तब–तब डोंगर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। डोंगर वह क्षेत्र है जहां हल्बा विद्रोह प्रारंभ हुई थी। इस विद्रोह के कई कारण थे जिनमें भौगोलिक सीमा, अनिश्चित वर्षा, आवागमन के कठिन साधन, कृषि योग्य सीमित भूमि तथा अजमेर सिंह की उपेक्षा प्रमुख कारण रहे है।[15] बस्तर सदा से ही पिछड़ा क्षेत्र रहा है। इस क्षेत्र में इन्द्रावती–घाटी में कृषि तकनीक में क्रांतिकारी परिवर्तन हस्तशिल्पकला कला के बढ़ावे एवं आर्थिक क्षेत्र में प्रगति का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा है।

1770 ई. केन्द्रीय शासन और भास्कर पंत के बीच शांति का सुलहनामा हुआ तो केन्द्र शासक ने इस बात की सहमति प्रदान की कि डोंगर क्षेत्र में एक नमक का बाजार खोल दिया जायेगा, किन्तु इस क्षेत्र को उसका अधिक लाभ प्राप्त नहीं हो सका। इस क्षेत्र में जीविको पार्जन के साधन बड़ें ही दुर्बल रहे है। वहां के लोगों को केवल इतनी सामग्री प्राप्त हुई जिससे वे जीवित रहें। अच्छी फसल के पश्चात् खाद्य संग्रह किया जाना एक आम बात है, किन्तु इस क्षेत्र में ऐसी स्थिति कभी नहीं आई। परिणामतः यहां पर प्राकृतिक आपदायें एवं अकाल का बोलबाला रहा है। अकाल की स्थिति यहां के लोकगीतों में भी देखने को मिलती है–

निमारे वे के दातोन खनानि, डोरि बूमि दातोन दादाले
बूमि दुकार दुकार रोय दादाले, बूमि ते दुकार अरितरोय दादाले
हिकाल हुरो भइसो रोय दादाले, सरपरने भाइसो अरित रोय दादाले
पोदोर पुंगार रोय दादाले, सरपने दोयो अरतु रोय दादाले,
पुहले देलात खनात रोय दादाले, वेतले मराते कवराल रोय दादाले,
कवर बोकर इन्त रोय दादाले, रइयक रेवोन कवराल रोय दादा ले।[16]

यहां की भौगोलिक एवं आर्थिक स्थिति के कारण जो राजनैतिक आपदायें निर्मित हुई, उनको यहां की राजनीति तथा मिट्टी ने भी बढ़ाने में काफी योगदान दिया है।[17] 1774 ई. में दरियावदेव ने सिंहासन पर बैठते ही डोंगर क्षेत्र को नजर अंदाज करने लगा, आर्थिक रूप से बहुत कमजोर बना दिया। साथ ही उसने डोंगर के गर्वनर अजमेर सिंह पर अनावश्यक धमकी भरा दबाव डालना शुरू कर दिया। 1774 ई. के बसंत ऋतु में भयानक अकाल प्रारंभ हुआ जो अधिकांश क्षेत्र में फैल गया तथा शीत ऋतु प्रारंभ होते ही विस्तृत पैमाने पर अराजकता फैलने लगी। वहां की स्थिति विनाश की चरमसीमा पर थी। इसी समय दरियावदेव ने वहां पर आक्रमण कर स्थिति को और अधिक गंभीर बना दिया।[18] इस अकाल में उसने आग में घी का काम किया। इस समय डोंगर क्षेत्र की रक्षा के लिये वहां कांकेर की सेना विद्यमान थी। दोनों सेनाओं के मध्य धमासान युध्द हुआ। दरियावदेव परास्त होकर अपने माड़ियां साथियों के साथ जगदलपुर भागने में सफल रहा।[19]

इस समय तक अजमेर सिंह व विद्रोहियों की स्थिति मजबूत हो गयी थी अब उन्होनें सम्पूर्ण बस्तर को अपने हाथ में लेने की योजना बनायी। वे ऐसा करके अंग्रेजी कम्पनी सरकार की जगदलपुर में दखलंदाजी को रोकना चाहते थें। उन्होने जगदलपुर की और प्रस्थान कर आगे बढ़ते हुए दरियावदेव की सेना को पराजित किया। दरियावदेव ने बस्तर की सीमा पार करके अपने प्राण बचाते हुए जयपुर राज्य (उड़ीसा) में शरण ली। इस प्रकार विद्रोह समूह का नेता अजमेर सिंह का विद्रोहियों नें बस्तर के राजा के रूप मे राजतिलक किया। विद्रोहियों में अधिकतर ने अपनी सफलता का उत्सव मनाया। कारण था कि उसका नेता अब बस्तर के सिंहासन का स्वामी हो गया था, और उन्होंने कम्पनी सरकार के षड़यंत्र का कड़ा जवाब दिया था।[20]

इस तरह दरियावदेव दो वर्ष शासन किये तथा उनके सौतेले भाई अजमेर सिंह ने कांकेर के राजा रामसिंह व हल्बा सैनिकों की मद्द से नारायणपुर के पास मालकोट नामक स्थान पर हराया था। दरियावदेव ने अपनी जान बचाकर जयपुर राजा विक्रमदेव प्रथम के यहां आश्रय प्राप्त किया। बस्तर की राजगद्दी पर अजमेर सिंह ने अपना अधिकार प्राप्त कर दो वर्ष तक सम्पूर्ण बस्तर के राजा बने रहे।[21]

जयपुर में रहकर दरियावदेव अपनी खोयी हुई शक्ति पुनः प्राप्त करने का प्रयास करने लगा। उसने अंग्रेजी कम्पनी सरकार के अधिकारी जान्सन व जयपुर के राजा विक्रम देव से प्रार्थना किया कि वें उसकी स्थिति को मजबूत करें। दरियावदेव ने जयपुर राजा के साथ एक संधि 1777 ई. में किया [22] जिसके अनुसार उन्हें बस्तर के पांच गढ़–कोट पाड़, चुरचुंड़ा, पोड़ागढ़, ओमरकोट व रायगढ़ा सैनिक सहायता के बदले जयपुर को देना था।[23] इस संधि के अंतर्गत दो शर्तें रखी गयी –

1. यदि मराठे बस्तर पर आक्रमण करते हैं तो जयपुर का राजा बस्तर की सहायता करेगा।
2. बस्तर राजा को कोटपाड़ के परगनों से महादान (100 बैलगाड़ी पर लदे व्यापारिक माल पर 25 रू. का कर) नामक कर वसूलने का अधिकार रहेगा।[24]

इस संधि के बाद दरियावदेव ने मराठों को भी अपने पक्ष में करने हेतु मराठा राजकुमार बिंबाजी भोसलें (छत्तीसगढ का शासक जो रायपुर मे था) के पक्ष में त्रयंबक अवीर राव के साथ संधि किया। संधि के अनुसार दरियावदेव ने सहायता के बदले बिंबाजी को प्रतिवर्ष चार हजार रूपयें देगा।[25] दरियावदेव ने अंग्रेज अधिकारी जानसन को भी वचन दिया कि यदि वह पुनः राज्य पाता है, तो वैसी स्थिति में बस्तर कम्पनी सरकार का होगा। इस प्रकार बस्तर की स्वतंत्रता का बलिदान करके दरियावदेव ने इन तीन राजाओं से सैनिक सहायता चाही।[26]

जयपुर राजवंशावली के अनुसार विक्रमदेव के प्रभार में बस्तर की ओर जाने वाली जयपुर की सेना में 15 हाथी सवार, 170 घुड़सवार, 50 जनरल, 12000 सशस्त्र सैनिक तथा 12 तोपें थी। त्रयंबक अबीर राव के सेनापतित्व में भोसला सेना भी काफी बड़ी थी। बस्तर पर हमला करने वाली सेना में कुल 20,000 सैनिक थे।[27]

इस बीच अजमेर सिंह की स्थिति खराब हो रही थी। उनकी कोई योजनाबध्द कार्यक्रम नहीं था। कांकेर की सहायता ने सांप छछुन्दर की गति ला दी। हल्बा सैनिकों में से अधिकांश डोंगर लौट चुके थे कि उन्हें किसी बाहरी आक्रमण की आशंका नहीं थी। अजमेर सिंह की सेना में अब माड़िया क्षेत्र से भरती की जा रही थी जो डोंगर के विरूद्ध थी। ये सेनापति अपने स्वामी अजमेर सिंह के प्रति स्वामीभक्त नहीं रखते थे। तुलनात्मक दृष्टि से उनकी आस्था दरियावदेव के प्रति अधिक थी जो जयपुर राज्य में रहकर चाले चल रहा था। हल्बा तथा माड़िया सेनाओं के बीच घातक भेद निर्मित हो रहा था। अजमेंर सिंह की सेना में भरती संबंधी योजना से रूष्ट होकर कांकेर की सेना जगदलपुर छोड़कर कांकेर वापस लौट गई।[28]

दरियावदेव ने इस परिस्थिति का लाभ उठाया। उसने जयपुर और मराठा सेनाओं को लेकर जगदलपुर पर आक्रमण कर दिया। इन सम्मिलित सेनाओं की शक्तियों के सामने अजमेर सिंह परास्त हो गया तथा उसने भागकर बडें डोंगर में आश्रय लिया। इस इलाके से अजमेर सिंह को पूर्व सहयोग मिलता था, यहां के हल्बा लोग उनके प्रबल समर्थक थे। यहां अपनी शक्ति संचित कर अजमेर सिंह ने दरियावदेव पर आक्रमण कर दिया।

इस बार दरियावदेव ने कुटनीति व छल से काम लिया। अपनी कुटिल योजना के तहत दरियाव देव ने अजमेर सिंह को संधि वार्ता के लिये आमंत्रित किया। संधि के अनुसार यह तय हुआ कि जगदलपुर पर दरियावदेव का तथा बड़ें डोंगर पर अजमेर सिंह का शासन रहेगा। आमंत्रण के प्रत्युत्तर में अजमेर सिंह बिना सैनिकों के घोड़े से अंगरक्षकों के साथ खुली पालकी में अपने भाई से भेंट करने आया। इसके पूर्व की अजमेर सिंह संभल पाते दरियावदेव ने उन पर आक्रमण कर उसे तलवार से घायल कर दिया। अजमेर सिंह किसी तरह जान बचाकर वहां से भाग निकले। घायल अवस्था में हल्बाओं ने उसे बड़े डोंगर ले गये। अजमेर सिंह पर तलवार का वार काफी घातक सिध्द हुआ। बड़े डोंगर में अजमेर सिंह का इलाज करवाया गया किन्तु वे बच न सकें कुछ समय बाद उनकी मृत्यु हो गई।[29] इस घटना का उल्लेख एक मुरिया लोक गीत में मिलता है–

मुलिर–मुलिर इन्तोनी कारी गुर्टी अगादा
मुलिर कारी गुर्टी।
रइनीगढ़ दा मुलिर दादा, हुरिंग मुलिर दादा
डोंगर कयांग तरवार दादा, होरमेण्ड
टोरमेण्ड, पूजा रोय कारी गुर्टी,
मिण्डाक टोरा रेयन्दु रोय कारी गुर्टी लुकर
मीनु, कुलनाह रोय कारी गुर्टी।
बारि मीनु तर्गनाह रोय कारी गुर्टी मुलिर
मुलिर
इन्तोनी कारी गुर्टी।[30]

इसके पश्चात सम्पूर्ण बस्तर पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के उद्देश्य से दरियावदेव ने बड़े डोंगर के क्षेत्र की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इस अंचल ने अजमेर सिंह का खुल कर साथ दिया था। इस क्षेत्र के मांझी मुखियों, प्रमुखों में हल्बा लोगों का पूरा समर्थन अजमेर सिंह को था। दरियावदेव उनसे अत्यधिक कुपित थे। उन्होंने हल्बा लोगों को तरह – तरह से प्रताड़ित करना प्रारंभ किया। इस पर राज्य के हल्बा लोगों ने दरियावदेव के विरूद्ध संगठित रूप से विद्रोह कर दिया।[31]

बड़े डोंगर के वनवासी हल्बों में अजमेर सिंह की मृत्यु के बाद विद्रोह की आग भड़क उठी। इस विद्रोह की सूचना पाकर दरियावदेव क्रोधित हो उठा, उसने विद्रोह को दबाने के लिये सेनापति नोहर सिंह और मोहन सिंह को बड़े डोंगर भेजा। दरियावदेव की सेना ने बड़े डोंगर और उसके आसपास के क्षेत्रों में लूटमार की घरों को जलाया कई हल्बों को अंधा बना दिया। अनेक विद्रोही हल्बों को 90 फूट ऊंचे चित्रकोट जलप्रपात के ऊपर से नीचे फेंक दिया गया। कहा जाता है कि इनमें से मात्र एक व्यक्ति किसी तरह बच सका। शेष सभी मारे गये। डोंगर के शिलालेख में इसका वर्णन मिलता है।[32]

कहा जाता है कि हल्बा लोगों को पूरी तरह से नष्ट करने की बड़ी क्रूर योजना दरियावदेव ने बनाई थी। हल्बा लोग पेशे से मूलतः सैनिक होते थे। वे वीर तथा लडाकू माने जाते थे। दरियावदेव ने वीर, युवक हल्बा लोगों से कहा कि चूंकि वे अपने को शारीरिक शक्ति से सम्पन्न वीर साहसी तथा निडर मानते है अतः उन्हें इसकी परीक्षा देनी होगी। उसने आदेश दिया कि वीर बलिष्ट हल्बा लोगों को ताड़ के वृक्षों के नीचे खड़ा किया जाय। एक–एक ताड़ वृक्ष के नीचे एक–एक हल्बा खड़ा किया गया। फिर राजा ने आदेश दिया कि ताड़ का वृक्ष काटा जावें तथा वृक्ष गिरने लगे तो उसके नीचे खड़ा हल्बा उसे अपने हाथ से इस तरह झेल ले कि वृक्ष भूमि पर गिरने न पाये। इस परीक्षा में असफल होने पर उसे मृत्युदण्ड का आदेश था। हल्बा योध्दाओं के लिये इस प्रस्ताव को मान लिये यह जानते हुए कि उन्हें तो मरना ही है। ताड़ वृक्ष काटे गये और उन्हें हाथों से झेलते हुए न जाने कितने हल्बा वीर वृक्षों के नीचे दब कर अकाल मृत्यु के ग्रास बने। तो वृक्षों से बचे उन्हें मौत के घाट उतारा गया। इस दर्दनाक प्रकरण को हल्बा लोग आज भी ''ताड़ झोकनी'' के नाम से याद करते है। बड़े डोंगर के एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि सन् 1779 ई. में हल्बा प्रमुखों तथा दरियावदेव के बीच बड़े डोंगर में संधि हुई और हल्बा लोगों में राजा के प्रति निष्ठा की शपथ ली। इसके बाद ही उनके विनाश का अभियान राजा दरियाव देव समाप्त किया।[33]

बस्तर के इतिहास में डोंगर विद्रोह के अंतर्गत हल्बों के न्यायप्रिय एवं विश्वास पात्र होने का एक प्रमाणिक सबूत मिलता है। डोंगर विद्रोह ने दरियावदेव के साम्राज्य की जड़े हिला दी थी। बड़े डोंगर जैसा नरसंहार विश्व के इतिहास में कभी नहीं हुआ जहां पूरी की पूरी जनजाति का सफाया कर दिया गया हो। इस प्रकार हल्बा विद्रोह का अंत हुआ, पर इसके कारण बस्तर के राजा की स्थिति बड़ी कमजोर हो गयी।[34] हल्बा विद्रोह की असफलता की प्रमुख वजह यह थी कि उसमें उत्साह निर्माण करने की शक्ति और करश्मिा का अभाव था तथा अन्य आदिवासी दलों विशेष कर दंडामी माड़ियों का समर्थन नहीं मिला एवं डोंगर क्षेत्र में अपनी स्थिति को सुरक्षित बनाने का प्रयास नहीं किया। ठोस राजनैतिक ढांचा न होने के कारण व कोई आधार भूत क्षेत्र न होने के कारण शीघ्र ही हल्बा विद्रोहियों का चार सेनाओं भोसला, जयपुरी अंग्रेज कंपनी व दरियावदेव की सेनाओं क्षरा नाश हो गया।[35] कांकेर राजा से मनमुटाव से अजमेर सिंह व हल्बा विद्रोहियों की शक्ति मकजोर हो गयी थी परिणाम स्वरूप बस्तर का भाग्य बदल गया। बस्तर मराठों के अधीन हो गया और भविष्य में वहां अग्रेजों के आगमन का मार्ग प्रशस्त हो गया। विद्रोह की समाप्ति के बाद बस्तर के राजा दरियावदेव ने 6 अप्रैल 1778 ई. को एक संधि पत्र पर हस्ताक्षर कर मराठों की अधीनता स्वीकार कर लिया और जयपुर के राजा को सहायता के बदले पुरस्कार स्वरूप कोटपाड़ परगना देना पड़ा।[36]

निष्कर्ष

इस तरह बस्तर के स्वाभिमान के प्रतीक अजमेर सिंह स्वाभाविक मौत नहीं मरा उसकी हत्या हुई। बाहरी शक्तियों और कंपनी सरकार की शह पर छल कपट से उसे मौत के घाट उतारा जाना उसे शहीद का दर्जा देता है। उसकी शहादत इस नाते मायने रखती है कि वह कंपनी सरकार की आंखों की किरकिरी था। उसके अनुयायी जिन हल्बा वीरों ने बलिवेदी पर प्राण न्यौछावर किये वे भी हमारें स्वतंत्रता संग्राम के अनाम शहीद है। आज हम उन हल्बाओं के नाम भी नहीं जानते,

न उनकी कोई समाधि है, न हीं स्तंभ किसी स्मारक की भित्ति पर उनका नाम भी अंकित नहीं है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम की अंकित गाथा में जनजातीय वीरों का बलिदान यूं ही प्रायः अनंकित ही है। इस अनंकित हल्बा जनों ने विद्रोह मात्र नहीं किया, वे अन्याय व दमन के खिलाफ अपनी आन–बान की पंरपरा को सर्वस्व न्यौछावर कर जीवित रखा उन्होनें पुर्खों की स्वाभिमान की पताका को झुकने नहीं दिया। उनका संघर्ष हमें प्रेरणा और हौसला देते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बेहार, रामकुमार, छत्तीसगढ़ का इतिहास, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर 2010, पृ. 172*
2. *श्रीवास्तव, निर्मलकांत, छत्तीसगढ़ के रियासतों में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, छ.ग. राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी ,रायपुर, 2009, पृ. 32*
3. *पूर्वोक्त , पृ. वही*
4. *ठाकुर ,केदारनाथ, बस्तर भूषण ,नवकार प्रकाशन कांकेर, पुर्नमुद्रित 2005 , पृ. 30*
5. *पूर्वोक्त, पृ. 32*
6. *वर्ल्यानी, जे. आर. एवं साहसी, व्ही.डी., बस्तर का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, दिव्या प्रकाशन ,कांकेर,1998,पृ. 29*
7. *झा,रोहिणी कुमार, क्रांतिदूत –प्रवीरचंद्र भंजदेव ,छ.ग. राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, रायपुर, 2007, पृ. 21*
8. *जगदलपुरी, लाला, बस्तर इतिहास एवं संस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2007, पृ. 84*
9. *पूर्वोक्त, पृ. 85*
10. *वर्ल्यानी,जे आर एवं साहसी, व्ही.डी., पूर्वोक्त, पृ. 39*
11. *शुक्ल ,हीरालाल, बस्तर का मुक्ति संग्राम, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल , 2009, पृ. 69*
12. *वर्ल्यानी, जे. आर. एवं साहसी ,व्ही.डी ,पूर्वोक्त, पृ. 49*
13. *शुक्ल, पूर्वोक्त पृ. 69*
14. *पूर्वोक्त, पृ. वही*
15. *शुक्ल, हीरालाल, आदिवासी बस्तर का वृहद इतिहास चतुर्थ खंड, बी.आर. पब्लिकेशन दिल्ली , पृ. 163*
16. *पूर्वोक्त ,पृ. 163–64*
17. *शुक्ल, हीरालाल, बस्तर का मुक्ति संग्राम, पूर्वोक्त ,पृ. 69*
18. *पूर्वोक्त , पृ. वही*
19. *वर्मा ,भगवान सिंह, छत्तीसगढ़ का इतिहास, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल , 2003,पृ. 239*
20. *शुक्ल, हीरालाल, बस्तर का मुक्ति संग्राम, पूर्वोक्त पृ. 71–72*
21. *झा,कृष्णकुमार, आश्लेषा एवं रोहिणी कुमार, बस्तर के लोक नायक– प्रवीर चंद्रभंजदेव और उनकी वंश परंपरा, विश्वभारती प्रकाशन नागपुर ,2006, पृ. 51*
22. *गजेटियर , कोरापुट, पृ. 242*
23. *ए. वेदीवली, दि रूलिंग चीफस नोबेल्स एण्ड जमींदार्स आफ इंडिया, जिल्द 1, मद्रास 1915, पृ. 460*
24. *बेहार, रामकुमार एवं निर्मला, बस्तर आरण्यक, निर्मला बेहार जगदलपुर, 1985, पृ. 35*
25. *ग्लासफर्ड रिपोर्ट,1862, पृ. 160*
26. *शुक्ल, हीरालाल ,पूर्वोक्त, पृ. 75*
27. *पूर्वोक्त ,पृ. वही*
28. *भंजदेव ,प्रवीरचंद, लोहंडीगुड़ा तरंगिनी ,लक्ष्मी प्रिंटिंग प्रेस रायपुर 1963,पृ.47 एवं बेहार, रामकुमार एवं निर्मला, पूर्वोक्त, पृ. 35*
29. *झा. कृष्णकुमार,आश्लेषा एवं रोहणी कुमार, पूर्वोक्त, पृ. 52–53*
30. *शुक्ल, हीरालाल, आदिवासी बस्तर का वृहद इतिहास ,पूर्वोक्त, पृ. 172*
31. *झा, कृष्णकुमार ,आश्लेषा एवं रोहणी कुमार, पूर्वोक्त, पृ. 53*
32. *रसेल,आर.व्ही. व हीरालाल,रायबहादुर, ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स आफ द सेंट्रल प्राव्हिसेंस आफ इंडिया, दिल्ली, 1975,पृ. 185*
33. *झा, कृष्ण कुमार, आश्लेषा एवं रोहणी कुमार पूर्वोक्त, पृ. 53–54*
34. *वर्मा, भगवान सिंह, पूर्वोक्त पृ. 239*
35. *शुक्ल, हीरालाल, बस्तर का मुक्ति संग्राम, पृ. 77*
36. *वर्मा, भगवान सिंह ,पूर्वोक्त, पृ. वही*